Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

जनवादी चेतना के अप्रतिम कविः नागार्जुन

मनोज कुमार यादव[1]

कबीर, महाप्राण निराला और मुक्तिबोध के बाद हिन्दी साहित्य में अगर कोई क्रांतिकारी कवि हुआ है तो वह नागार्जुन ही है। स्वतंत्रता के बाद भ्रष्टाचार में डूबे भारतीय राजनेताओं और उनके चमचों के प्रति, मानवीय मूल्यों की निरन्तर बढ़ती हुई ह्रासोन्मुखी प्रवृत्तियों के प्रति, अन्याय एवं अत्याचार के प्रति, मजदूरों–किसानों यानी निम्न मध्यवर्गीय गरीब जनता के शोषण के प्रति आक्रोश नागार्जुन की कविता में दिखाई देता है। वे यथार्थपरक दृष्टिकोण को बड़े व्यंग्यात्मक लहजे में उसकी अभिव्यक्ति कर देते हैं। लोकजीवन की जितनी गहरी संपृक्ति नागार्जुन की रचनाओं में मिलती है, किसी अन्य कवि में नहीं। लोकगीतों का संस्पर्श देकर बोलचाल की भाषा को काव्यभाषा का गरिमा प्रदान करना नागार्जुन की विशेषता है।

ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन सन् 1910 ई0 (तरौनी, जिला दरभंगा) को 'दीन–हीन–कृषक–कुल' में नागार्जुन का जन्म हुआ, 5 नवंबर 1998 को उनकी जीवन लीला का अंत। किसानों से उनका निकट संबंध हमेशा जुड़ा रहा। उनकी कविता किसान–संवेदना का सजग और परिष्कृत रूप है। बिहार के मधुबनी गाँव में एक साधारण ब्राह्मण–किसान परिवार में जन्मे वैद्यनाथ मिश्र सिंघल में बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद नागार्जुन हो गये। बौद्ध धर्म का सन्देश इनकी विचारधारा के मेल में भी था। लेकिन वह बौद्ध भी क्या जो बुद्ध के मार्ग पर चलकर 'प्रबुद्ध' न हो जाय? लिहाजा विवाह के एक वर्ष बाद ही पत्नी को छोड़कर इन्होंने घुमक्कड़ी जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ कर दिया। घुमक्कड़ी और फक्कड़पन इनकी कविता में रच–बस गई है। इसके अतिरिक्त नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, स्वामी सहजानन्द तथा राहुल सांकृत्यायन जैसे लोगों के सम्पर्क में नागार्जुन की रचना–दृष्टि के निर्माण में काफी सहायता मिली। नागार्जुन भारतीय समाचारपत्रों में आजादी की लड़ाई की खबर पढ़ते और पढ़कर क्रोधित होते। बिहार में स्वामी सहजानन्द किसान आन्दोलन चला रहे थे। स्वामी जी ने नागार्जुन को पत्र लिखा कि ''वहाँ अतीत के बिल में घुस बैठे हो, वर्तमान संघर्ष के खुले मैदान में आओ।''[2] सामाजिक अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध लड़ते हुए इन्हें कई बार जेलयात्रा भी करनी पड़ी। आम आदमी के दुःख–दर्द, उसके संघर्ष तथा उसकी जिजीविषा को उसी की भाषा में अभिव्यक्त करने की कला नागार्जुन को जनवादी चेतना के रचनाकार के रूप में प्रतिष्ठित करती है।

[1] पी जी टी (हिंदी), + 2 बी.डी. उच्च विद्यालय, सकरी गली, साहेबगंज, (झारखण्ड)

[2] आलोचना, अंक–56–57, पृ 223

नागार्जुन की प्रमुख विशेषता यह है कि उन्होंने अपनी निजता को जनता के सुख–दुख से इस तरह एक कर लिया था कि उनकी रचनाओं के माध्यम से हम स्वतंत्र भारत में जनता की प्रतिक्रियाओं का इतिहास पढ़ सकते हैं। जनता के हित से एकाकार हो जाने के नाते उनके लिए व्यक्तिगत मित्रता–शत्रुता का कोई अर्थ नहीं रह गया। दोस्त और दुश्मन सबको समान भाव से रगड़ते–धुनकते वाले नागार्जुन की निस्पृहता का संबंध उनके सार्थक जीवन–ध्येय से है– 'जन–जन में जो ऊर्जा भर दे, मैं उद्‌गाता हूँ उस रवि का।' जनता में ऊर्जा भरने की जरूरत है ताकि वह अन्याय सहन न करे, अपना जीवन स्वयं रचे। नागार्जुन की क्रातिकारी चेतना और रचनात्मक प्रेरणा का यह मूलस्रोत है। आज जब चकाचौंध भरे बाजारवाद में उपेक्षित जनता को राजनीतिज्ञों और संस्कृति कर्मियों ने भुला दिया है, तब नाजार्जुन का यह सचेतन हठ बार–बार हमारी कुंद संवेदनाओं का द्वार खटखटाता है कि– 'बताऊँ? कैसे लगते हैं– / दरिद्र देश के धनिक? / कोढ़ी कुढ़ब तन पर मणिमय आभूषण।'

नागार्जुन ने समाज के निम्नवर्ग को महसूस किया, पेरशानियों में अपना जीवन व्यतीत किया। उनके दुखों को नजदीक से समझा और तब वे उनके यथार्थ को अपने काव्य में चित्रित कर पाये। भारतीय किसान एवं जन–सामान्य की असीम शक्ति को नागार्जुन ने पहचाना, उन्हें अपना 'मानस–पुत्र' बनाया। उनके दिल में मेहनत और मेहनतकश के लिए आग है। उनकी तड़प–छटपटाहट धरती से जुड़ी है। नागार्जुन के विषय में कमलेश्वर के ये वाक्य उनकी इस पक्षधरता को ज्यादा अच्छी तरह व्यक्त करते हैं– ''नागार्जुन से मिलना तो भीतर की आग माँगना, बहुतों के पास नहीं होती यह। खुद वह नहीं देगा। किसी शाम या सुबह उसके साथ लग जाना, तब वह जलता हुआ शहर तुम्हें दिखायेगा। और गौर से देखना, उस शहर के बीचों–बीच वह खुद भी जल रहा होगा।''[1] वे सामाजिक सरोकार को केन्द्र में रख कर कविता कहते हैं। आजादी के बाद देश में जमींदार, नेता एवं व्यापारी है तब तक भारत का कल्याण नहीं हो सकता है। दरअसल, किसानों पर होने वाले अत्याचारों को इन्होंने महसूस किया। वे इन लोगों को अत्याचारों से छुटकारा दिलाने की कामना करते हैं।

नागार्जुन की कविता 'अकाल और उसके बाद' अर्थ–गांभीर्य में अकाल–पीड़ित गरीब जनता की सारी संवेदनाओं का सही बिम्ब प्रस्तुत करती है। मानवीय करूणा और व्यंग्य का ऐसा सहसंबंध कम कविताओं में मिलता है। हमारे धरती के सपूत उत्पादक और निर्माता होते हुए भी भूखे व दरिद्र रह जाते है। अनाज के भण्डार जमाखोर रख लेते हैं और आम जनता भूखों मरती है इसका एक बहुत दर्दनाक चित्र कवि नागार्जुन ने 'अकाल और उसके बाद' कविता में प्रस्तुत किया है–

''कई दिनों तक चूल्हा रोया चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त

[1] लहर, नागार्जुन विशेषांक, पृ0 201

कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त''
(अकाल और उसके बाद)

'अकाल और उसके बाद' कविता पर डॉ. विश्वम्भर 'मानव' का कहना है कि '' 'अकाल और उसके बाद' कविता में लोकबिम्बों का ही प्रयोग हुआ है। अकाल पड़ने पर नागार्जुन की संवेदना केवल मनुष्य के लिए ही नहीं प्रकट होती बल्कि पहले–चरण में तो मनुष्य कहीं है ही नहीं, परोक्ष रूप से चूल्हा और चक्की के माध्यम से ही उसकी उपस्थिति का एहसास होता है। निरन्तर मनुष्य के साथ रहने वाले, चूहे, छिपकलियाँ और कानी–कुतिया और कौआ ही है जिनके माध्यम से नागार्जुन अकाल की स्थिति को व्यक्त करते हैं। सम्पूर्ण जगत को, सृष्टि को एक अखंड सत्ता मानने के कारण ही ऐसा संभव हुआ है।''[1]

नागार्जुन ने पूँजीवाद का जमकर विरोध किया। उन्होंने पूँजीपतियों, जमींदारों, साहूकारों आदि लोगों का विरोध किया जो समाज के गरीब वर्ग व अनपढ़ लोगों पर अत्याचार करते रहे और वे गरीब किसानों, मजदूरों पर आधिपत्य करना चाहते थे। नागार्जुन ने इन अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाई। उनकी कविताओं में देश–प्रेम की भावना का भी विकास हमें दिखाई देता है। राष्ट्रीयता एवं देश–प्रेम की भावनाओं का स्वरूप देश के अतीत गौरव गान इत्यादि से भिन्न है। कवि अपने निवास स्थलों (जनपद–ग्राम इत्यादि) की ओर देखकर प्रेम से मग्न होता है। स्वजन्मभूमि 'तरउनी ग्राम' से दूर पड़ा हुआ कवि नागार्जुन अपनी सिन्ध प्रवास की बेला में गा उठता है–

''याद आता मुझे अपना वह तरउनी ग्राम
याद आती लिचियाँ और आम
याद आते मुझे मिथिला के रूचिर भू–भाग
याद आते धान
याद आते कमल, कुमुदिनि और तालमखान''

नागार्जुन की कविताएँ मूलत धरती की गंध लिए हुए है फिर वह धरती चाहे खेत के रूप में खेतिहरों (किसान) से सम्बन्धित हो, ग्राम से सम्बन्धित हो, या देश से। धरती को महत्व देने वाली उनकी काव्य चेतना क्रमशः प्रगतिवाद और राष्ट्रवाद को स्पर्श करती दिखलाई देती है–

''खेत हमारे भूमि हमारी, सारा देश हमारा है,
इसीलिए तो हमको इसका चप्पा–चप्पा प्यारा है।''

नागार्जुन के अनुसार राष्ट्रप्रेम के निर्वाह के लिए कठोर श्रम आवश्यक है, भारत माता का यशोगान पर्याप्त नहीं है। वे कहते हैं कि– ''आराम करने की ऊब से बेचैन लोगों से मेरा वास्ता नहीं। मेरा लेखन परिवार तो–खेतिहर, मजदूर, मेहनतकश, ठेला खींचने वाले, लारी चलाने वाले, बूढ़े–बच्चे हैं।''[2]

---

[1] आधुनिक कवि : विश्वम्भर 'मानव', रामकिशोर शर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2011, पृ0 173

[2] आलोचना, अंक–56–57, पृ0 242

हिन्दी कविता में सर्वहारा वर्ग के संघर्ष की आवाज बुलन्द करने वालों में नागार्जुन अग्रणी है। नागार्जुन समाज तथा देश के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ एवं जागरूक कवि है। देश की असहाय अवस्था से उनका हृदय पीड़ित हो उठा। उनकी कविता में जनता का संघर्ष मूर्तिमान है। गाँधी जी की हत्या से भावाकुल कवि की छटपटाहट में युग का यथार्थ रूप झलक रहा है। नेताओं के बदले हुए स्वरों से कवि को बड़ी चोट पहुँचती है। उन्होंने जनभाषाओं को अपनाया। उपमानों को चुनने में भी जनभावनाओं को प्रमुखता प्रदान की–

"महँगाई कैसे बढ़ी है
जैसे द्रौपदी की साड़ी हो"

नागार्जुन ने सामाजिक जीवन की विभिन्न घटनाओं एवं परिस्थितियों की भी व्यंजना की है। उनका मत है कि कविता का सम्बन्ध सामाजिक वास्तविकता से है और वही कवि उत्कृष्ट है जो वास्तविकता के प्रति सजग और संवेदनशील है। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की मृत्यु पर उनकी एक प्रमुख कविता 'महाशत्रुओं की दाल न गलने देंगे हम' को देखिए–

"बापू मरे.....
अनाथ हो गई भारत माता
अब क्या होगा .....
हाय ! हाय ! हम रहे कहीं के नहीं
लुट गये
....रो रो करके आँखे लाल कर ली धूर्तों ने।"

नागार्जुन को प्राकृतिक सौन्दर्य से काफी लगाव था। उनकी कविता में प्रकृति सौन्दर्य की नैसर्गिक गन्ध भी विद्यमान है। विभिन्न प्राकृतिक स्थलों का अनेक बार यात्रा के दौरान कवि ने प्रकृति का वास्तविक रूप देखा और उसे स्वाभाविक रूप में ही अपनी कविताओं में उतारा। इस सम्बन्ध में उनकी कविता 'बादल को घिरते देखा है' बहुत प्रसिद्ध है। इस कविता में ऋषियों और देवताओं की साधनास्थली हिमालय की घनाच्छादित उपत्यकाओं के उद्दीपक परिवेश में, कवि की 'स्मृत्याभास कल्पना' में सजीव हुए, पौराणिक सन्दर्भों को अत्यत कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। प्रकृति–वर्णन में नागार्जुन संस्कृत कवियों (मुख्यतः कालिदास) से प्रभावित जान पड़ते हैं। नागार्जुन में दृश्य–विधान की अद्भुत क्षमता है। हिमालय का मनोहारी प्राकृतिक परिवेश तथा उसका संश्लिष्ट चित्रण करने वाले बिंब और प्रतीक आदि भाषिक उपकरण निम्न मध्यवर्गीय पृष्ठभूमि के न होते हुए भी अपनी कलात्मक संरचना में नागार्जुन के कवि–कर्म का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसमें कवि ने देखा की एक कस्तूरी मृग जो बर्फानी पहाड़ी पर उछल–कूद कर रहा है। घिरे हुए बादल, फिसलते हुए बर्फ और उसपर कस्तूरी मृग के चिढ़न को कवि ने एकदम भावना के स्तर पर जाकर उभारा है। आदमी को आदमी के भावों को समझने में दिक्कत होती है पर कवि समझता है पशु के मनोभावों को भी, ऐसा मृग जो नाभि में अवस्थित कस्तूरी के पीछे भाग रहा है–

"दुर्गम बर्फानी घाटी में/शत सहस्त्र फुट ऊँचाई पर/
अलख नाभि से उठने वाले/निज के ही उन्मादक परिमल/
के पीछे धावित होकर/तरल तरुण कस्तूरी मृग को/

अपने पर चिढ़ते देखा है/बादल को घिरते देखा है।''

कवि नागार्जुन सुधार की भावना से प्रेरित होकर सामयिक समस्याओं के वर्णन में व्यंग्य दृष्टि जोड़ देता है। वह पूँजीवाद को उसकी शोषण की प्रवृत्ति को आधुनिक राजनीति को, उसकी झूठी लीडरी को तथा अन्य आर्थिक और सामाजिक विषमताओं के समर्थकों को अपने व्यंग्यों का लक्ष्य बनाता है। नागार्जुन के नुकीले व्यंग्य के मूल में सामाजिक दुर्दशा से उत्पंन है। उनकी तिलमिलाहट पुलिस, हाकिम, लीडर सभी के अत्याचार के प्रति है। नागार्जुन आज की दूषित राजनीति की बात बड़े मारक ढ़ंग से करते हुए भ्रष्टाचार एवं मूल्यहीनता पर व्यंग्य किया है–

''सपने में भी सच मत बोलना वरना पकड़े जाओगे
भईया लखनऊ, दिल्ली पहुँचो मेवा मिसरी पाओगे
माल मिलेगा रेत सको यदि गला मजदूर किसानों का''

वे 'आये दिन बहार के' शीर्षक कविता में बड़े ही निर्मम भाव से एक कांग्रेसी नेता पर लिखते हैं कि–

''दिल्ली से लौटे है टिकट मार के
खिले है दाँत जैसे दाने अनार के''

एक जगह नौटंकी दूसरी जगह लोकगीत के छौंके लगाकर नागार्जुन ने व्यंग्य को अनूठी धार दे दी है। डॉ. नामवर सिंह के शब्दों में– ''व्यंग्य के इस विद्वत्ता ने ही नागार्जुन के अनेक कविताओं को काव्यमयी बना दिया है। जिसके कारण वह कभी बासी नहीं हुई और वही तात्कालिक बनी हुई है। यह निर्विवाद है कि कबीर के बाद हिन्दी कवियों में नागार्जुन से बड़ा व्यंग्यकार अब तक कोई न हुआ है। नागार्जुन के काव्य में व्यक्ति के इतने व्यंग्य चित्र है कि उनका एक विशाल एलबम तैयार किये जा सकते हैं।'' शोभाकान्त मिश्र के अनुसार– ''कहना न होगा कि राजनीति के इस अतिचार के विरुद्ध नागार्जुन ने हमेशा लेखनी उठाई है और साहित्य और साहित्यकार के संघर्ष को प्रतिष्ठित किया है। उनके समीक्षात्मक लेखों में यह सात्विक क्रोध सर्वत्र दिखाई पड़ता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि इतना हलाहल पीकर भी कोई व्यक्ति कैसे इतने दिन तक अपना सन्तुलन बनाए रख सका और कैसे इतनी कालजयी वृत्तियाँ हिन्दी साहित्य को दे सका? यह उन्होंने हिन्दी साहित्य की संघर्षधर्मी परम्परा से सीखा होगा।''[1]

नागार्जुन हिन्दी के अतिरिक्त मैथिली भाषा के भी सशक्त रचनाकार है। मैथिली में वह 'यात्री' उपनाम से लिखते रहे। मैथिली काव्य–संग्रह 'पत्रहीन नग्नगादि' पर इन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ था, लेकिन स्वाभिमानी 'यात्री' ने इसे स्वीकार नहीं किया। हिन्दी और मैथिली के अतिरिक्त संस्कृत, पालि, प्राकृत तथा सिंघली आदि भाषाओं के अध्ययन ने भी नागार्जुन के रचनाकर्म को प्रभावित किया है।

---

[1] नागार्जुन : चुनी हुई रचनाएँ, संपादक–शोभाकान्त मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1985 ।

हिंदी में यायावरों की कमी नहीं है। लेकिन नागार्जुन 'यात्री' है। अभावग्रस्त–अव्यवस्थित जीवन और पिता के साथ बचपन से मिले घुमक्कड़ी के संस्कार, दोनों ने उन्हें गतिशील बनाया। यायावर का भ्रमण उद्देश्यहीन और दिशाहीन होता है। नागार्जुन की जीवन–यात्रा मैथिल लोककवि से हिंदी के जातीय कवि तक और वैष्णव संस्कार से बौद्ध होते हुए मार्क्सवादी क्रांतिकारी तक एक दिशा और उद्देश्य का साक्ष्य देती है। दरिद्रता के कोढ़ पर धनिकों का श्रृंगार जैसा वीभत्स है, वैसा ही वैषम्य राजनीति में भी है–'जनता के कुछ और सत्य है, शासन के कुछ और।' ऐसी बेबाकी उन लोगों में नहीं हो सकती जिन्हें शासन से बहुत कुछ चाहिए।

संभवत नागार्जुन अकेले ऐसे कवि है जो स्वतंत्रता के पहले सहजानंद सरस्वती और राहुल सांकृत्यायन के साथ किसान आंदोलन में जेल गये, फिर स्वतंत्रता के बाद तेलंगाना संघर्ष के समय और आपातकाल में संपूर्ण क्रांति के समर्थन के लिए जेल गए। क्षीणकाय, दमे के मरीज, लेकिन हिम्मत के धनी नागार्जुन 'शासन की बंदूक' से नहीं डरते बल्कि 'धरती की कोख' से अपनी ताकत खींचते हैं और स्वप्निल सौंदर्य की पराकाष्ठा तक जाकर देखते हैं– ''अभी–अभी करवटें लेंगे/बूदों से सपने/फूलों के अंदर/फलों–फलियों के अंदर।'

देश और विचारों में जीवन भर यात्रा करने वाले नागार्जुन के नामों का भी एक दिलचस्प यात्रा है। 1929 में पहली कविता 'वैद्यनाथ मिश्र 'विद्यार्थी' तरौनी निवासी' के नाम से प्रकाशित हुई थी। दो साल बाद मैथिली का 'विद्यार्थी' हिन्दी का 'विदेह' हो गया। फिर, 1934 में वह 'यात्री' बना। 'विशाल भारत' का कहानीकार 'अकिंचन' यही यात्री है। 'नागार्जुन' नाम पड़ा श्रीलंका के बौद्ध मठ में। तब से यात्री मैथिली में और नागार्जुन हिंदी में साथ–साथ लिखते रहे। नागार्जुन आधुनिक युग के उन विरल लेखकों में हैं जो अंग्रेजी भले कम जानते हों, संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, बंगला, मैथिली और हिंदी इतनी तो जानते ही हैं कि उनमें रचना कर सकें। भाषा का उनका संसार उनके अनुभव और रचना के संसार की ही तरह विस्तृत हैं।

निष्कर्षतः नागार्जुन में जनवादी भावनाओं, परिवर्तन और विद्रोह की भावनाओं तथा भंगिमाओं के अतिरिक्त सामाजिक, राजनैतिक विसंगतियों के प्रति गहन व्यंग्यात्मकता का अद्भुत सामंजस्य है। उसमें आक्रोश, क्षोभ, अक्खडता, तीक्ष्णता, क्रांति की पुकार, देश की रक्षा की उत्कट उमंग, शोषित और उपेछितों के प्रति सहानुभूति सबकुछ तो है ही, प्रकृति के नैसर्गिक छवियों और व्यक्तिगत रागात्मक अनुभूतियों का चित्रण भी है। यह कहा जाता है कि नागार्जुन ऐसे कवि है जो अभावों में ही जन्मे थे, पीड़ित वर्ग के कष्टों को इन्होंने स्वयं झेला है। निसंदेह ऐसा ही व्यक्ति भारत की निम्नवर्गीय जनता का सच्चा सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व कर सकता है।